ISSN (Online): 2583-5777 पूर्वोत्तर प्रभा, वर्ष-3, अंक-1 (जनवरी-जून, 2023)

पूर्वोत्तर प्रभा

(सिक्किम विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित अर्धवार्षिक शोध पत्रिका)

Journal Home Page: **http://supp.cus.ac.in/**

अपने समय का विलक्षण रंगशिल्पी: हबीब तनवीर

तेजस्वरूप त्रिवेदी

सहायक निदेशक (राजभाषा)

संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली

ईमेलः tejswarooptrivedi4@gmail.com

शोध सारांशः

भारतीय रंगमंच और पाश्चात्य रंगमंच के संदर्भ में विविध विमर्शों की सुदीर्घ श्रृंखला रही है। बहुत से निर्देशकों ने पाश्चात्य रंगशिल्प को अपनाया, बहुत से निर्देशकों ने शास्त्रीय रंगशिल्प का अनुशीलन किया, ऐसे भी बहुत से निर्देशक हैं जिन्होंने उक्त दोनों के साथ लोकरंग शैली के सामंजस्य पर बल दिया। आज भी उक्त सभी प्रवृत्तियाँ भारतीय रंगमंच की अंग हैं। तथापि हबीब तनवीर जैसे रंग निर्देशक ने एक ऐसी शैली विकसित की, जिसने भारतीय रंगजगत के एक बिल्कुल नवीन पक्ष को उद्घाटित किया। हबीब ने पाश्चात्य रंगमंच का अध्ययन और आधुनिक भारतीय रंगमंच के विविध पक्षों का अनुशीलन के आधार पर यह स्थापित किया कि भारतीय नाट्य की आत्मा वास्तव में लोकनाट्य की विविध शैलियाँ हैं और अपनी विविध नाट्य प्रस्तुतियों के माध्यम से अपनी इस स्थापना को उन्होंने सिद्ध भी किया। हबीब ने बिल्कुल अलग नाट्य शैली विकसित की, जिसे अब नया थिएटर के रूप में जाना जाता है।

बीज शब्द- हबीब तनवीर, कला और संस्कृति, शास्त्रीयता बनाम लोकपक्ष, देशज शिल्प की तलाश, भारतीय रंग परिदृश्य, भारतीय रंगमंच का पुनर्सृजन, रंगकर्म की लोकोन्मुख धारा।

मूल लेख-

हबीब तनवीर (1923-2009) ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि मैंने संस्कृति के विभाजन को आसान कर दिया है। इसे दो भागों में बांटा है—उत्पीड़क की संस्कृति और उत्पीड़ित की संस्कृति। अब यह आपको तय करना होगा कि आप किस पक्ष के हैं—ज़ालिम या मज़लूम? यह जो उनके सोचने का नज़रिया है, उससे यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि हबीब किस पक्ष के थे, उनकी पक्षधरता किसके प्रति थी। उन्होंने

कला के लोकपक्ष को आत्मसात् किया लेकिन यह अंधानुकरण नहीं था। वह इस बात से भलीभांति परिचित थे कि लोक कला हो या साहित्य यदि सावधानी न बरती गई तो उनमें विद्यमान सामंतवादी तत्व हावी होते चले जाएँगे। चरणदास चोर, लाला शोहरत राय, मिट्टी की गाड़ी, आगरा बाजार, देख रहे हैं नैन, कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना, जिन लाहौर नहीं वेख्या, बहादुर कलारिन और हिरमा की अमर कहानी जैसे नाटकों का लेखन, रूपांतरण और निर्देशन करते समय हबीब तनवीर ने हमेशा इस तथ्य को याद रखा और लोक परम्परा में विन्यस्त सामंतवादी तत्वों को मुस्तैदी से बरजते रहे।

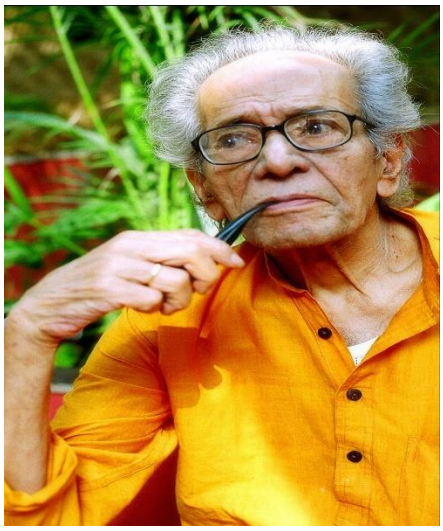

(1926-2009)

लोग अक्सर हैरत जताते हैं कि हबीब तनवीर ने ही नहीं बल्कि कई अन्य नाट्य निर्देशकों ने भी नाटक की लोक शैलियों के साथ काम किया, लेकिन उससे भारतीय रंगकर्म को लाभ के बजाय नुकसान ही हुआ, केवल हबीब तनवीर ही एक ऐसे निर्देशक हैं जो लोक शैलियों के माध्यम से भारतीय रंगमंच को कुछ नया दिया, कुछ ऐसा दिया जो भारतीय रंग परम्परा को समृद्ध करने और आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ। कारण स्पष्ट है, हबीब लोक शैलियों में विन्यस्त सामंतवादी तत्वों के प्रति सदैव सचेत रहे और सचेष्ट भाव से उन तत्वों को आपने नाटकों से दूर रखा, जबकि दूसरे निर्देशकों ने इस पर ध्यान नहीं दिया।

हबीब तनवीर पहले प्रगतिशील लेखक संघ से जुड़े, फिर भारतीय जननाट्य संघ से उनका जुड़ाव हुआ। मुम्बई रेडियो में बतौर प्रोड्यूसर काम करने के बाद दिल्ली आए और यहाँ कुदसिया ज़ैदी के हिन्दुस्तानी थिएटर से जुड़ गए। हबीब नाटक तो कर रहे थे, लेकिन वह अपने शिल्प से संतुष्ट नहीं हो पा रहे थे। उन्हें एक ऐसे शिल्प की तलाश थी जिसमें भारत की स्थानीयता का परस हो, लोक संस्कृति वाली जीवंतता हो। यही असंतुष्टि उन्हें लोक शैलियों की तरफ लेकर गई। वह रायपुर लौटे, गाँव-गाँव भटके, लोकगीतों और लोकनाट्य की विविध शैलियों को करीब से देखा-परखा और जब दोबारा दिल्ली लौटे तो उनके साथ लोक कलाकारों की एक मंडली भी थी। यह वही मंडली थी जिसके साथ हबीब ने लगभग चार दशकों तक बहुत से नाटक तैयार किए और उनका मंचन किया।

हबीब तनवीर का समय वास्तव में सांस्कृतिक रूप से बहुत ही जटिल समय था। उस समय भारतीय रंगकर्म की मुख्य रूप से दो धाराएँ थीं, एक लोक रंगमंच था तो दूसरा आधुनिक। आधुनिक रंगमंच वास्तव में यूरोप या पाश्चात्य शैली का किंचित परिवर्धित संस्करण था। यह वही समय था जब राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय एक नया स्वरूप ग्रहण कर रहा था। इब्राहिम अल्काज़ी यूरोप से ड्रैमेटिक्स पढ़-समझ कर आए थे और वह भारतीय सांस्कृतिक परिदृश्य के अनुरूप एक नया रंगमंच गढ़ रहे थे। एक अन्य रंगधारा थी जो पूरी तरह से लोक आधारित थी और उसका शिल्प भी पारम्परिक था। लोक नाट्य परंपरा में नये विषयों का प्रवेश अधिक सरल नहीं था। लोकनाट्य के लगभग सभी रूपों में विशिष्ट प्रकार के विषयों, विशेष रूप से धार्मिक और पौराणिक कथा तत्व, को ही प्रमुखता प्राप्त थी। यह कलाकार पेशेवर भी नहीं थी। विशेष अवसरों पर ही प्रस्तुतियों का चलन था। और इन प्रस्तुतियों से जुड़े कलाकार भी परंपरागत थे जो सामान्य दिनों में रोज़गार के दूसरे साधनों से जुड़े होते थे।

आधुनिक नाटकों का शिल्प भारत की स्थानीयता से असम्पर्क के कारण अजनबीयत का भाव पैदा करता था। आस्वादक भी एक विशेष वर्ग के ही होते थे। तात्पर्य यह कि भारतीय रंगमंच को पुनर्जीवित करने के लिए नाट्यशास्त्र के विविध तत्वों को अंगीकृत तो किया जा रहा था लेकिन पाश्चात्य प्रभावों पर अतिशय ज़ोर के कारण बात बन नहीं पा रही थी। निर्देशक हों, कलाकार हों या दर्शक—सभी के अंदर अधूरेपन या कुछ तो गड़बड़ है वाला भाव रह ही जाता था। हबीब का अपने गाँव लौटना और वहाँ नाचा, माच और ऐसी ही अन्य नाट्य शैलियों का अध्ययन करना—इसी अतृप्ति का परिणाम था। हबीब तनवीर को यह बात बहुत अच्छी तरह से समझ में आ गया था कि भारतीय मानस लोकरंजन का पोषण करता है। बौद्धिकता का गाम्भीर्य यहाँ बहुत अधिक कारगर नहीं हो सकता। वैसे भी, जिसको संबोधित करना है यदि संबोधन उसी की भाषा और शिल्प में हो तभी ग्राह्यता का मान बढ़ेगा।

हबीब तनवीर की रंगजगत में जो पहचान है, जो प्रसिद्धि है उसका कारण नाट्य शिल्प का यही विवेक है जो उन्होंने निश्चित रूप से अपने श्रम और समझ से अर्जित किया था। यह महज घटना नहीं है कि हबीब ने अपने नाटकों की भाषा में बड़ा बदलाव किया। उन्होंने शेक्सपीयर का नाटक किया हो या किसी अन्य का, भाषा में छत्तीसगढ़ी लब-ओ-लहजा स्थायी रहा। उन्होंने शेक्सपीयर के नाटक मिड्सनाइट ड्रीम का जो रूपांतरण किया, उसका शीर्षक ही पूरी दास्तान बयान करने के लिए काफ़ी है। उन्होंने मिड्स नाइट ड्रीम को कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना नाम से रूपांतरित किया था। इस नाटक को देखते हुए मुझे लगा ही नहीं कि यह शेक्सपीयर के नाटक का रूपांतरण है। छत्तीसगढ़ी भाषा, स्थानीय मुहावरे और लोक नाट्य के विविध आयामों से युक्त शिल्प—यह सचमुच नया थिएटर ही था। आधुनिक कथा भूमि को लोकशिल्प से श्रृंगारित कर उन्होंने बिल्कुल नया रंगमंच रच डाला था।

यहाँ तक की नज़ीर अकबराबादी के जीवन और कर्म पर आधारित उनका नाटक आगरा बाज़ार भी अपने शिल्प और कहन में ठेठ हिंदुस्तानी था। चरणदास चोर ने तो रंगमंच के वैश्विक पटल पर अपनी धाक जमाई थी। तात्पर्य यह कि हबीब ने अपनी माटी और अपनी बानी को आधुनिक रंगमंच पर कुछ इस तरह से स्थापित किया कि देखने वाले देखते ही रह गए। यह सवाल अक्सर उठता है कि हबीब ही की तरह कई अन्य

निर्देशकों ने भी लोक नाट्य के विविध रूपों को अपनी आधुनिक प्रस्तुतियों का अंग बनाया, किन्तु उन्हें वैसी सफलता नहीं मिल सकी जैसी कि हबीब को मिली। बल्कि यहाँ तो उल्टा ही हुआ, भारतीय रंगमंच का स्वरूप इन प्रयोगों से विकृत ही हुआ। मेरी समझ में इसका जो मूल कारण था वह बस इतना था कि हबीब ने सब्ज़ी में नमक डालने जैसे चातुर्य से काम लिया। उन्होंने लोक या आधुनिक तत्वों का उतना ही अंश लिया जो मिश्रण के आस्वाद को बढ़ा सके। अधिकांश निर्देशकों ने लोक शिल्प को हू-ब-हू अपनाया और परिणाम निराशाजनक रहा। हबीब अक्सर कहा करते थे कि लोक समाज की जो चेतना है, उसमें सामंती तत्वों की भरमार है। ऐसे में सांस्कृतिक पक्ष का अछूता रह जाना संभव नहीं है। अतः जब हम अपनी आधुनिक प्रस्तुतियों में लोक तत्वों को जोड़ते हैं तो हमें बहुत ही सचेत रहने की ज़रूरत पड़ती है। सामंती तत्वों को छांट कर अलग करना पड़ता है और लोकापेक्षी अंगों को थोड़ी साफ-सफाई के साथ अपनाना पड़ता है। अगर हम समग्रता के लोभ में पड़ते हैं तो रंगमंच की मूल आत्मा का ही गला घोंट देते हैं और इस तरह जिस प्रभाव की कामना हम करते हैं, वह उत्पन्न नहीं हो पाता।

अशोक बाजपेयी ने 'चरणदास चोर' के संदर्भ में बहुत अच्छी बात कही है जो हमारे उपरोक्त कथन की पुष्टि करते हैं। उन्होंने कहा कि चरणदास चोर उस आधुनिकता से असम्पृक्त था जिसका विकास इब्राहिम अलकाज़ी ने किया था। हबीब उस संयमित आधुनिकता से भी अछूते थे जिसे शंभु मित्र ने विकसित किया था। हबीब तनवीर के नाटकों में जो आधुनिकता नज़र आती है, वह हबीब तनवीर की अपनी खोज थी। यह आधुनिकता दरअसल बहुत पकी हुई आधुनिकता नहीं, बल्कि कच्ची, ऊबड़-खाबड़ और बीहड़ थी। यह ऐसी आधुनिकता थी जो भारतीय रंग परिदृश्य का नया आख्यान प्रस्तुत करती थी। नया थिएटर रचती थी। हबीब तनवीर ने हमेशा रस निष्पत्ति पर ध्यान केन्द्रित किया। उनके रंग व्याकरण का केन्द्रीय तत्व यही था, यही रहा। संतोष की बात है कि हबीब तनवीर के बहुत से प्रशिक्षित निर्देशक और अभिनेता आज भी उसी लीक का अनुसरण कर रहे हैं।

नया थिएटर अब भी अस्तित्व में है और अभी उनकी पुत्री नगीन तनवीर इस संस्था को चला रही हैं। हबीब तनवीर द्वारा निर्देशित विभिन्न नाटकों का मंचन, हबीब के ही नाट्य शिल्प में आज भी विविध मंचों पर प्रदर्शित हो रहा है। तथापि, उक्त संस्था द्वारा कोई नई नाट्य प्रस्तुति तैयार नहीं की गई है जो कि ध्यान आकृष्ट करने वाली हो। नया थिएटर से अलग होकर कुछ कलाकारों ने अपनी अलग रंगमंडली स्थापित की है, लेकिन उन रंगमंडलियों के नये कामों में हबीब जैसी दूरदर्शिता और प्रयोगधर्मिता का अभाव है। यह तथ्य दुखद तो है, किन्तु संस्था का बने रहना एक उम्मीद को भी बचाए रखता है। मुझे लगता है कि हबीब जैसी ही किसी उत्कृष्ट प्रतिभा के आने तक यदि संस्था बची रहती है तो यह लोकाश्रित आधुनिक रंगमंच पुनर्जीवन अवश्य ही पाएगा।

संदर्भ सूची-

1. Reflections & Reminiscences, Compiled & Edited by Neeraj Malik, Sahmat, New Delhi, 2010
2. आगरा बाज़ार, हबीब तनवीर, वाणी प्रकाशन, संस्करणः2, 2010
3. Memoirs, Habib Tanvir, Penguin India, 2013
4. कलायात्रा (हिन्दी पत्रिका), प्र.संपादकः सचिव चतुर्वेदी, अंक-2, जून 2021
5. आजकल (हिन्दी पत्रिका), मुख्य संपादकः कुलश्रेष्ठ कमल, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नवंबर 2023